

Vgl. Rām. Schl. II. cv. 24, 25.

यथा काष्ठं च काष्ठं च समेयातां महार्षि ।
 समेत्य च व्यपेयातां कालमासाद्य कंचन ॥
 एवं भार्याश्च पुत्राश्च ज्ञातयश्च वसूनि च ।
 समेत्य व्यवधावन्ति ध्रुवो क्षेपां विनाभवः ॥

und Rām. Gorr. II. civ. 12, 13.

यथा काष्ठं च काष्ठं च समेयातां महोदधौ ।
 समेत्य च व्यपेयातां स्थित्वा किञ्चित्क्षणात्तरं ॥
 एवं भार्याश्च पुत्राश्च सुहृदश्च वसूनि च ।
 समेत्य व्यवधीयन्ते ध्रुवस्तेषां पराभवः ॥

Gorresio a. a. O. führt aus der Bengalischen Recension des Rāmā-
 jana noch folgende Formen ohne Augment auf: मां ब्रवीत् (माब्रवीत्?)

III. LXXIV. 12. मां ब्रुवंश्च (माब्रुवंश्च?) महर्षयः IV. LXIII. 46. उत्तिष्ठत् III.
 LXXI. 11. अगच्छत् V. XXXIV. 14. Der gelehrte Herausgeber geht aber
 offenbar zu weit, wenn er auch बिभ्रत् I. XLVI. 30. für ein Imperf.
 nimmt: es ist das Partic. Praes.

KAPITEL XXV.

Str. 8. b. अज्ञातवासं वसतस्. Vgl. zu XI. 17. b.

Str. 13. a. Vgl. zu XX. 23. b.

KAPITEL XXVI.

Str. 1 a. उष्य wie त्यज्य Viçv. VIII. 11. a. Vgl. ausserdem
 Gorresio a. a. O. S. LXXIV. und LXXV. Umgekehrt kommt die
 Form auf त्वा auch bei componirten Verbis vor, so Rām. ed Schl.
 I. 1. 63. उत्स्मायित्वा, I. 1. 72. निवेदयित्वा, Viçv. IV 5. var 1. संचि-
 तयित्वा.

Str. 2. a. परिषोडश्. परि kann in diesem Worte unmöglich ganz
 müssig sein : wenn ich nicht irre, drückt es aus, dass die folgende